International Journal of Applied Research 2019; 5(1): 415-418

**ISSN Print:** 2394-7500
**ISSN Online:** 2394-5869
**Impact Factor:** 5.2
IJAR 2019; 5(1): 415-418
www.allresearchjournal.com
Received: 20-11-2018
Accepted: 25-12-2018

**शशि प्रभा**
पूर्व–शोधार्थी, विश्वविद्यालय हिन्दी–विभाग, ल.ना.मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वरनगर, दरभंगा, बिहार, भारत

**Corresponding Author:**
**शशि प्रभा**
पूर्व–शोधार्थी, विश्वविद्यालय हिन्दी–विभाग, ल.ना.मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वरनगर, दरभंगा, बिहार, भारत

# प्रेमचन्द की कहानियों में बाल–चरित्र का चारित्रिक वैशिष्ट्य

## शशि प्रभा

**सारांश**
प्रेमचंद की कहानियों में समाज के सभी वर्ग पात्र बने हैं, पर जितनी सफलता उन्हें बाल चरित्र के निर्माण में मिली है, उतनी अन्यत्र कहीं नहीं। उनकी कहानियों में प्रयुक्त बाल–चरित्र कहीं से भी बनावटी या काल्पनिक नहीं लगते हैं। वे इतने सच्चे और अच्छे हैं कि पाठक सहज ही उनके साथ भाव–यात्रा करने लगते हैं। प्रेमचंद की कहानियों के बाल–चरित्र सभी प्रकार के मानवीय गुणों से लबालब हैं। उनमें दया, करूणा, क्षमा, सहानुभूति, आत्मसम्मान, वीरत्व, जिज्ञासा, सेवाभाव, सका समावेश है। उनमें मानव सुलभ संघर्षशीलता भी है, जो कभी भी अपनी परिस्थिति से टकराने के लिए उन्हें तैयार रखता है।

**प्रस्तावना**
बालचरित्र को लेकर प्रेमचंद ने कई कहानियाँ लिखी हैं। उन चरित्रों के चित्रण की खासियत यह है कि वे किसी बने–बनाये फ्रेम में कसे हुए नहीं हैं। वे अपनी तमाम खूबी और खामियों के साथ पाठक के सामने आते हैं और परिस्थितियों के साथ–साथ उनके व्यक्तित्व का स्वाभाविक विकास होता है। इससे निश्चय ही पात्रों की विश्वसनीयता भी बढ़ी है और वे वातावरण के अनुरूप प्रभाव पैदा करने में भी सफल हुए हैं। अगर 'ईदगाह' के पात्र हामिद को ही लें तो वह पहले आम बच्चों की तरह मेले में जाने के लिए उत्साहित है। रास्ते में शहर की समृद्धि देखकर वह भी आम बच्चों की तरह चकित होता है। नमाज के बाद मेला घूमने के क्रम में अपने अन्य दोस्तों की तरह मिठाइयों और खिलौनों को देखकर वह भी ललचाता है। मगर उसे इस सच्चाई का पता है कि उसकी जेब में कुल जमा तीन ही पैसे हैं और वह जानता है कि तीन पैसों में न तो वह जी भर कर मिठाइयाँ खा सकता है, न मन के लायक कायदे का कोई खिलौना मोल ले सकता है। इस सच्चाई को जानने के बावजूद होना तो यही चाहिए था कि वह अपनी जेब के हिसाब से ही कतर–ब्योंत कर थोड़ी बहुत मिठाई भी खा लेता और एकाध खिलौना भी ले लेता। मगर नहीं, तब यह प्रेमचन्द का पात्र नहीं बन पाता और उस पात्र में कोई विशिष्टता भी नहीं आ पाती। इसलिए प्रेमचन्द हामिद के ऊपरी स्वरूप से अलग उसके अन्दर के द्वन्द्व को देखते हैं। मासूम बच्चे के अंदर बैठे उस प्रौढ़ के दर्शन करते हैं जो अपने मासूम विचारों से लड़कर परिपक्व विचार पर विजय प्राप्त करता है, जिसके अन्तर्गत उसे मिठाइयों और खिलौनों से ज्यादा जरूरी लोहे का चिमटा खरीदना लगता है। उसे लगता है कि मिठाई घड़ी भर के लिए तृप्ति देने वाली चीज है। खिलौने भी क्षणिक ही हैं, जल्दी टूट जायेंगे, फिर उन चीजों से केवल उसी का स्वार्थ सधेगा, जबकि चिमटा घरेलू उपयोग की चीज है। यह चाहे तो उससे मन भी बहला सकता है और उसकी दादी उसका उपयोग कर रोटी सेंकते वक्त उंगलियाँ जलाने से बच जायेगी।

इस पात्र के जरिये प्रेमचन्द यह दिखलाने में सर्वथा सफल होते हैं कि वर्ग के अन्तर से सोच–समझ और व्यवहार में भी अंतर आ जाता है। हामिद भी अगर खाते–पीते समृद्ध परिवार का बालक होता तो वह भी अन्य बच्चों की तरह वैयक्तिक स्वार्थ सिद्धि को ही ज्यादा महत्त्व देता और यहीं आकर वर्ग–आधारित सामंती सामाजिक ढांचे का असली रूप सामने आ जाता है। यह एक प्रकार की विद्रूपता ही है। बच्चों का अकाल प्रौढ़ सोच वाला हो जाना निश्चय ही समाज व्यवस्था की विकृति मानी जायेगी। [1]

'बड़े भाई साहब' कहानी में दो छोटे–बड़े भाइयों के माध्यम से इस सच्चाई को सामने लाया गया है कि ज्ञान और अनुभव परीक्षाओं में पास कर जाने से अर्जित नहीं होता। दूसरा यह कि पढ़ने का आशय केवल परीक्षाएँ पास कर लेना नहीं होता। पढ़ाई का अर्थ होता है ज्ञानार्जन, विषयों की गहरी जानकारी और समझ। अधिकतर छात्र परिक्षोपयोगी पढ़ाई की बदौलत अच्छे नम्बरों से पास तो कर जाते हैं, मगर उन्हें अपने विषय का बुनियादी ज्ञान भी नहीं होता।

साथ ही शिक्षा का अर्थ शालीनता, बड़ों का आदर करना, अनुशासन और शिष्टाचार है। यदि पढ़ाई के बाद ये गुण नहीं आये तो पढ़ना बेकार ही है।

इस कहानी में बड़ा भाई समझदार है, मगर परीक्षा में वह अक्सर फेल हो जाता है। जबकि छोटा भाई कम समझदार होते हुए भी हर परीक्षा में अव्वल आता है और अब नौबत यह आ गयी है कि बड़े भाई से वह महज एक दर्जा नीचे रह गया है। जबकि दोनों की उम्र में पूरे पांच साल का अन्तर है। छोटे भाई के मन में इस सफलता से घमंड आ जाता है। यह एकदम स्वाभाविक स्थिति है। जब दोनों साथ–साथ पढ़ते हों और फिर भी बड़ा भाई फेल हो जाये तो बच्चे के मन में यह विचार आयेगा ही कि वह बड़े भाई से ज्यादा होशियार है। और जब ज्यादा होशियार है तो अब वह अपने मन का खुद ही मालिक भी है। बड़े भाई को कोई हक नहीं है कि उस पर किसी बात की पाबंदी लगायें अथवा हर बात में टोका–टोकी करें। इसी भावना से प्रेरित होकर वह उच्छृखल और उदंड होता जा रहा है। बड़े भाई के प्रति उसके मन में अब वह सम्मान और लिहाज नहीं रह गया है। इससे बड़ा भाई चिंतित हो जाता है। उसे भय है कि ऐसे तो पारिवारिक मर्यादा ही खत्म हो जायेगी। दूसरे वह निरंकुश होकर बेरास्ते भी जा सकता है। तब तो एक अच्छा–खासा बच्चा बर्बाद ही हो जायेगा। वह काफी आत्मीयता और शांतभाव से उसे यह सब समझाता है। उसे बताता है कि हमारे पिता तो हमसे भी कम पढ़े–लिखे हैं तो क्या इसी से उनकी प्रतिष्ठा हमारे सामने कम हो जायेगी? आदमी को उम्र और अनुभव का हमेशा ख्याल रखना चाहिए। बड़ा भाई चाहे फेल होते–होते उसका समकक्ष ही क्यों न हो जाये, उन दोनों के बीच जो उम्र का फासिला है, वह हमेशा रहेगा और इसीलिए उसे बड़े भाई का सदैव सम्मान करना होगा, उसकी आज्ञा का पालन करना होगा।

छोटा भाई समझ जाता है। यही बात बड़ा भाई अगर क्रोध में कहता तो शायद इसका ऐसा अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ता। मगर प्यार से किसी का दिल आसानी से जीता जा सकता है। इस सामाजिक–परिवारिक मूल्य को स्थापित करने में प्रेमचन्द की यह कहानी पूर्णतः सफल रही है और इसके दोनों पात्र अनायास ही पाठक का हृदय मोह लेते हैं।

'सच्चाई का उपहार' एक सद्विचारी बालक की कहानी है। वह जिस विद्यालय में पढ़ता है वहाँ के कुछ सामंती मिजाज के बच्चे एक दिन विद्यालय परिसर के उद्यान को उजाड़ कर तहस–नहस कर देते हैं। उनकी इस करतूत को वह बालक बाजबहादुर संयोग से देख लेता है। शैतान बच्चों द्वारा उसे धमकी दी जाती है कि यदि चुगली खायी तो खैर नहीं। वह स्पष्ट कहता है कि चुगली तो वह बिल्कुल नहीं खायेगा, मगर मास्टरजी ने यदि उससे पूछ दिया तो वह झूठ भी नहीं बोलेगा। इस पर उन लड़कों ने भी कह दिया कि तो सच बोलने की सजा भी भुगतनी पड़ेगी।

शिक्षक ने जब उद्यान की दुर्दशा देखी तो क्रोधित हुए। बच्चों से पूछताछ की मगर किसी ने डर के मारे मुंह नहीं खोला। शिक्षक को बाजबहादुर पर विश्वास था कि वह कभी झूठ नहीं बोलता और सचमुच बाजबहादुर ने पूछे जाने पर सब कुछ बता दिया। शैतान लड़कों को सजा मिली। इसका बदला चुकाने के लिए उन लोगों ने छुट्टी के बाद बाजबहादुर को रास्ते में घेर लिया। एक ने घूसा ताना, दूसरे ने अमरूद की एक छड़ी चला दी। मगर बाजबहादुर दुबला–पतला होने के बावजूद कमजोर नहीं था। उसने छड़ी वाले की छड़ी छीन ली और लगा ताबड़तोड़ चलाने। इससे लड़के तितर–बितर हो गये। तभी अचानक एक लड़के ने बाजबहादुर की पसली पर एक बूंसा जमा दिया। वह उसके लिए तैयार नहीं था। नतीजे में अचेत होकर गिर पड़ा। लड़कों ने समझा, वह मर गया। मारे डर के सब भाग खड़े हुए। [2]

लड़कों को अब यह भय सताने लगा कि पोल खुलते ही उनकी दुर्गति हो जायेगी। इसलिए उन्होंने स्कूल जाना बंद कर दिया। इधर बाजबहादुर की चोट चूंकि मामूली थी इसलिए वह कल से ही पूर्ववत स्कूल जाने लगा। उसके व्यवहार में भी कहीं कोई अंतर नहीं था और नहीं उसने मास्टरजी से कोई शिकायत की थी। तीन दिनों तक लगातार जब उसके वे साथी स्कूल नहीं आये तो चौथे दिन वह स्वयं उनके घर पहुँच गया। उसने उनसे पूछा कि तीन दिनों से स्कूल क्यों नहीं आ रहे हो? लड़कों ने जबाव दिया–स्कूल क्या हम लोग पिटाई खाने के लिए आएँ? इस पर उसने समझाया कि ऐसी कोई बात नहीं है। उसने मास्टरजी से उस घटना का जिक्र तक नहीं किया है। अतः डरने की कोई बात नहीं है।

पहले तो लड़कों को लगा कि बाजबहादुर चालाकी कर रहा है। मगर उसके द्वारा समझाये जाने पर वे स्कूल जाते हैं और वास्तव में जब उन्हें पता चलता है कि वहाँ सब कुछ सामान्य है तो वे अपने किये पर लज्जित होते हैं और बाजबहादुर से माफी मांगते हैं।

इसमें प्रेमचन्द का आशय यह है कि सत्य की हमेशा विजय होती है। मगर इससे भी जो बड़ी बात उन्होंने कहनी चाही है, वह यह कि बच्चे चाहे लाख शैतान हों, सरल हृदय होते हैं। आवेश में आकर भले वे आपस में लड़–झगड़ लें मगर उनके मन में कोई कटुता नहीं आती द्य वे क्षणे रुष्टा, क्षणे तुष्टा होते हैं, अभी किसी के लिए मन में कटुता आयी और अभी सब कुछ भूलकर फिर से आपस में मिल–जुल जाते हैं, उनके अन्दर कोई द्वेषभाव नहीं रहता। बाज बहादुर उन्हें कहता है– "शिकायत की कौन बात थी। तुमने मुझे मारा, मैंने तुम्हें मारा, अगर तुम्हारा चूसा न पड़ता तो मैं तुमलोगों को रणक्षेत्र से भगाकर दम लेता। आपस के झगड़ों की शिकायत करने की मेरी आदत नहीं है।" [3]

प्रेमचन्द ने इस पात्र के जरिये यह दिखलाना चाहा है कि बच्चों का मन एकदम साफ होता है, वे छल–प्रपंच नहीं जानते। वे आपस में यदि लड़ते–झगड़ते भी हैं तो उनके मनपर इसका कोई स्थायी प्रभाव नहीं रहता। मगर यह बाजबहादुर की कोई विशेषता नहीं हैं, उसकी विशेषता तो यह है कि वह अपने मित्रों की बदमाशी की शिकायत स्कूल में नहीं करता, उल्टे वह यह कहता है कि आपसी झगड़े की शिकायत करने की उसकी आदत नहीं है, यही उसे आम बालकों से विशिष्ट बनाता है और यही प्रेमचन्द के चरित्र चित्रण की भी विशिष्टता है।

इसी प्रकार से 'गुल्ली–डंडा' एक अद्भुत कथा है। इसके बाल चरित्र बचपन में गुल्ली–डंडा के खेल में हार–जीत के सवाल पर आपस में झगड़ लेते है। यहाँ तक कहा–सुनी हो जाती है कि कथा के नायक ने जो अपने उस साथी को कभी अमरूद खिलाया था वह तक उसके पेट से उगलवाने पर उतारू हो जाता है। मगर जब वह पढ़–लिखकर सयाना होता है और बड़ा अधिकारी बन जाता है तो उसे बचपन का वह साथी गया और गुल्ली डंडा का खेल याद आता है और अपने ओहदा और रुतबा को ताक पर रखकर उसके साथ गुल्ली–डंडा खेलने लगता है। यहाँ आकर कहानी समाप्त–सी लगने लगती है, मगर नहीं, कहानी का यह केवल एक पड़ाव भर हैं, यहाँ से कहानी अगले पड़ाव की ओर बढ़ती है। नायक गया के साथ खेल तो रहा है मगर गया अब वह गया नहीं है। गुल्ली गया के सामने से निकल गयी। उसने हाथ लपकाया मगर ऐसे जैसे मछली पकड़ रहा हो। वह लगातार हारता जा रहा था, जो गया पहले बड़े–बड़ो के छक्के छुड़ा देता था, वह आज अनाड़ियों की तरह खेल रहा था। यहाँ तक कि नायक कभी–कभी बेईमानी भी कर लेता था, मगर गया चुपचाप से अपनी हार स्वीकार कर लेता। जबकि यही गया बचपन में बेईमानी करनेवालों की गर्दन पर चढ़ जाता था।

कल होकर गुल्ली–डंडा का मैच था। कथा नायक भी देखने के लिए बुलाया गया था। आज जो उसने गया के खेल का रंग–ढंग देखा तो स्तब्ध रह गया। उसके सामने बचपन वाला वही गया खेल रहा था, जिसका कोई जोड़ नहीं था। ऐसा डंडा चला रहा था कि गुल्ली वाउन्ड्री को पार कर जाती थी। अब नायक की

समझ में आ गया कि कल गया उसके साथ खेल नहीं रहा था, बल्कि उसे खेला रहा था। अर्थात् उसके ओहदे का मान रख रहा था और तब नायक की समझ में यह भी आ गया कि अफसर होने के कारण गया उसे अपने समकक्ष नहीं समझता। अपने जोड़ का नहीं समझता। अर्थात उसकी अफसरी ने उससे उसके बचपन का साथी छीन लिया है। यही अनुभूति इस कहानी की असली विशेषता है, जो कथानायक में अभी भी बनी हुई है। वह इस बात को जान गया कि बचपन ही वह नियामत है जब आदमी ऊँच–नीच, छोटे–बड़े का भेदभाव नहीं समझता। सयाना होते ही आपसी संबंध कमजोर होते जाते हैं। इन छोटी–छोटी मगर दार्शनिक सचाइयों का उद्घाटन जिस सहजता से प्रेमचन्द ने किया है, यही प्रेमचन्द के चरित्र–चित्रण की विशिष्टता है।

कभी–कभी सजा भी किसी व्यक्ति के सौभाग्य का मार्ग प्रशस्त कर देती है। सौभाग्य के कोड़े का पात्र नथुवा एक ऐसा ही बालक है। यह अनाथ बालक एक राय साहब की दया पर जी रहा है। वह घर के छोटे–मोटे काम करता है और परिवार वालों के जूठन खाकर पल रहा है। लगभग उसी की उम्र की राय साहब की बेटी उससे हमदर्दी रखती है। इसलिए उससे वह जरा घुलमिल गया है। एक रोज राय साहब की बेटी का कमरा साफ करते हुए उसके मन में गद्देदार पलंग का आनंद उठाने की ललक जाग जाती है। वहाँ इसके अतिरिक्त चूंकि कोई नहीं है, इसलिए निर्भय होकर पलंग पर लेटने का मजा लेता है। तभी राय साहब कमरे में आ जाते हैं और नथुवा को पलंग पर लेटने के अपराध की सजा कोड़े मार कर देते हैं और अन्ततः घर से निकाल देते है।

नथुवा वहाँ से भाग कर डोमों की बस्ती में चला जाता है, वहाँ एक गुरु के सान्निध्य में विभिन्न वाद्ययंत्रों और गायन की शिक्षा ग्रहण करता है, वहाँ के बाद वह ग्वालियर के संगीत विद्यालय में और फिर जर्मनी के सबसे बड़े संगीत विद्यालय से भारतीय और पाश्चात्य संगीत की शिक्षा ग्रहण कर बाजाब्ता संगीताचार्य हो जाता है। अब वह नथुवा से ना० रा० आचार्य के नाम से देश–विदेश में विख्यात हो गया है। उसके बाद जब वह वापस लखनऊ आता है तो उसी राय साहब की बेटी से उसकी शादी होती है और उसी हवेली में, उसी शयनगृह में और उसी पलंग पर सुहागरात मनाता है, जिस पर लेटने के कारण उसे मार पड़ी थी और घर से निकाला गया था। हालांकि रायसाहब की बेटी ने उसे पहचानते हुए जान–बूझ कर उससे शादी। की कदाचित बचपन से ही वह इस हीरा को पहचानने लगी थी और मन ही मन सहानुभूति ही नही, प्यार भी करती थी। इसीलिए जब नथुवा लखनऊ आया तो स्वागत करनेवालों में रायसाहब की बेटी सबसे आगे रहती है और फूलों की माला से स्वागत करती है।

आशय यह कि हीरा जब तक घूल में पड़ा रहे उसका कोई मोल नहीं होता, मगर वही जब किसी पारखी के हाथ लग जाय तो अनमोल हो जाता है, नथुवा के चरित्र–चित्रण के जरिये प्रेमचन्द ने इसी सच्चाई को सफलतापूर्वक दिखलाया है।

कहते हैं कि दूध का दाम कोई नहीं चुका सकता। मगर यह सब कहने–सुनने की बातें हैं, दूध का दाम कहानी में जो शूद्र महिला अपने बच्चे का पेट काट जमींदार साहब के बच्चे को अपने स्तन का दूध पिलाती है, उसी के बेटे मंगल के साथ बाद में जमींदार साहब, उनकी पत्नी और यहाँ तक कि बेटा भी कुत्तों जैसा व्यवहार करता है। इस कहानी का पात्र मंगल जब अनाथ हो जाता है तो जमींदार साहब उसे दूध की कीमत यही अदा करते हैं कि अपने घर के सामने के नीम के पेड़ के नीचे सोने की इजाजत देते हैं, खाने के लिए घर भर का जूठन मिट्टी के बर्तन में देते हैं और लज्जा निवारण के लिए अपनी फटी–पुरानी धोती दे देते हैं।

इस कहानी में धर्म के पाखण्ड को भी दिखलाया गया है। मंगल की माँ का दूध पीकर पलने वाला जमींदार का बच्च अपवित्र नहीं होता, मगर मंगल के छू देने से अपवित्र हो जाता है। 'दूध का दाम' कहानी के संदर्भ में डॉ० सुभाष चन्द्र ने एक जगह लिखा है– ''प्रेमचन्द ने बड़े प्रतीकात्पक ढंग से बच्चों के खेल के माध्यम से दलितों के शोषण को उद्घाटित किया है। तीन बच्चे मंगलू को जबरदस्ती घोड़ा बना देते हैं। वे तीन बच्चे ऊपर के तीन वर्गों की तरह हैं जो दलित–शूद्रों पर सवारी करने के लिए तरह–तरह के प्रपंच रचते हैं, उसका बरतालाकर उसका शोषण करना चाहते हैं।'' [4]

'प्रेरणा' का नायक बचपन में भारी उदंड है, उसके आचरण से छात्र तो छात्र उसके स्कूल के शिक्षक भी आतंकित रहते हैं। वह इसी आतंक के बल पर बिना पढ़ाई किये भी हर दर्जे में पास करता जाता है। उसके शिक्षक जब समझाते हैं तो वह उनकी बातों पर कभी ध्यान नहीं देता। खास तौर से उसके वर्ग शिक्षक उसे सुधारने के सारे उद्यम करके हार चुके थे।

बाद में शिक्षक महोदय का वहाँ से तबादला हुआ। विभागीय तिकड़मों की वजह से उन्हें नौकरी गंवानी पड़ी। वह अपने गाँव में ही नदी के किनारे घर बनाकर रहने लगे और एक विद्यालय खोलकर शिक्षण कार्य में लग गये।

इधर वह उच्छृंखल बालक सूर्यप्रकाश अपने उस शिक्षक के तबादले से बहुत दुःखी हुआ। वह स्वभाव से भले उदंड था, मगर अपने वर्ग–शिक्षक की मन ही मन इज्जत करता था। तभी उसके साथ रहने के लिए उसके रिश्ते का एक भाई आ गया। वह शरीर से दुर्बल था और हमेशा बीमार रहता था। उसे स्वस्थ रखने के लिए सूर्य प्रकाश भी सबेरे उठने लगा और उसे पढ़ाने के लिए स्वयं भी पढ़ने लगा। नतीजा हुआ यह कि उसका भाई मोहन भी पढ़–लिख गया और वह स्वयं भी पढ़–लिखकर डिप्टी कलक्टर बन गया। मगर वह अपने वर्ग शिक्षक की शिक्षाओं को नहीं भूला था। इसलिए वह उनके गाँव पहुंचा और उनके चरण–स्पर्श कर आशीर्वाद मांगा। वर्ग शिक्षक अपने बिगड़े हुए छात्र के इस रूप को देखकर गदगद हो गये। सूर्य प्रकाश ने उन्हें बताया कि उसके जीवन के आदर्श वही हैं, जबकि प्रेरणा उसका भाई मोहन है।

यह कहानी भी अपने मूलरूप में इसी बात पर आधारित है कि कोई भी बच्चा अंतिम रूप से बुरा नहीं होता। अच्छी परवरिश और अनुकूल वातावरण मिलते ही वह सफलता के मार्ग पर अग्रसर हो जाता है। सूर्य प्रकाश पर भी जवाबदेही आयी तो उसे अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान हो गया और वह अपने भाई का भविष्य सुधारने के लिए पहले अपने आचरण में सुधार लाने में लग गया। उसके इसी बदलाव ने उसे सफलता दिलायी। अगर वह अंदर का बुरा होता तो शिक्षक के तबादले से वह दुखी नहीं होता। उन्हें वह अपना आदर्श मानता था। क्योंकि बुरा से बुरा व्यक्ति अन्तरात्मा से सज्जन व्यक्ति की इज्जत करता है। यही कारण है कि वह बड़े पद पर पहुँचने के बाद भी अपने गुरु को भूला नहीं है और उनका चरण रज लेने उनके गाँव पहुँच जाता है।

बच्चे निश्छल होते हैं। वे गलतियाँ करते हैं। मार खाने के भय से झूठ भी बोलते है, मगर इससे उनके आपसी संबंध पर कोई असर नहीं पड़ता। 'चोरी' शीर्षक कहानी में यही सच्चाई सामने आती है। इसके दो चचेरे छोटे–बड़े भाई ऐसे ही पात्र हैं। बड़ा भाई घर से रुपये चुराता है। मगर वह सोचता है कि किसी को राजदार बना लेना चाहिए। अन्यथा उसे भय है कि छोटा भाई जान जाने पर चुगली लगा सकता है। इसलिए अपनी चोरी में उसे भी शामिल कर लेता है और उसके उपभोग की संयुक्त योजना बनाता है। फिर भी संकट यह है कि इतनी बड़ी राशि आखिर खर्च कैसे हो। इसके निदान के लिए वे स्कूल की फीस अदा कर देते हैं। बचे हुए पैसों से मेले में जाकर मौज–मस्ती करनी थी। छोटे भाई को स्कूल से पहले ही छुट्टी मिल गयी क्योंकि उसने गृहकार्य कर लिया था। बड़े ने गृहकार्य पूरा नहीं किया था इसलिए उसे बाद में छुट्टी मिली। छोटा मेला देखने चला गया। बड़ा मेला जाता उससे पहले ही भाण्डा फूट गया और चोरी

पकड़ ली गयी। उसकी जमकर पिटाई हुई। छोटा तत्काल मेले में था इसलिए बच गया। मगर जब वह वापस आया तो सारा माजरा साफ हो चुका था। उसे भय था कि अब उसकी भी पिटाई होगी। इसलिए वह साफ झूठ बोल गया कि चोरी बड़े भाई ने की थी और उसे धमकी भी दी थी कि चुगली करोगे तो पीगा। इस पर वह बाल–बाल बच गया। मगर वह रात गुजरी और बात भी गुजर गयी। उनके मन में कोई भेदभाव नहीं रहा। सुबह दोनों भाई साथ–साथ गुड़ और चबेना बैठकर खा रहे थे।

बच्चों के निश्छल चरित्र को दिखाने में प्रेमचन्द यहाँ पूर्णतः सफल हुए हैं सचमुच बच्चे मन के सच्चे होते हैं। उनको किसी से बैर नहीं होता। एक पल पहले वे आपस में झगड़ते हैं, मगर दूसरे ही पल फिर से घुलमिल जाते हैं। पिछली सारी बातें भूल जाते हैं।

'बूढ़ी काकी' में एक ऐसी बच्ची है– लाडली, जिसके माता–पिता अपनी विधवा और संतानहीन चाची की सारी सम्पत्ति हड़प कर भी उसे न तो समुचित भोजन देते हैं, न स्वजनों जैसा व्यवहार। एक लाडली ही है जो दादीसे स्नेह रखती है(6), वह अपने हिस्से की खाने–पीने की चीजें दादी को अन्य लोगों से छुपाकर खिलाती रहती है। लाडली न होती तो यह निश्चय था कि बेचारी बूढ़ी भूख और अपमान के कारण कब की मर–खप गयी होती।

घर में एक वैवाहिक आयोजन है, तरह–तरह के पकवानों की खुशबू से काकी विचलित हो रही है। मेहमानों से लेकर सारे परिजनों, यहाँ तक कि नौकर–चाकरों तक को पूछ–पूछकर खिलाया जा रहा है, मगर काफी को कोई पूछने वाला नहीं। उसकी किसी को सुधि नहीं। उल्टे जब वह अपने कमरे से निकल कर बाहर आती, तो अपमानपूर्वक वहाँ से भगा दी जाती। लाडली को दादी की यह उपेक्षा और उसका अपमान नागवार गुरजता है। मगर अपने माँ–बाप के कोप से न तो वह कुछ बोल पाती है। न कर पाती है। उससे अपना भोजन तक निगला नहीं जाता है। इतने बड़े आयोजन में लोग अघाकर खायें और दादी भूखी रहे। अंत में वह अपना भोजन गुड़िया की पेटी में छुपाकर रख लेती है और जब सब लोग सो जाते हैं तो अ हिस्ता से जाकर दादी को खिला देती है। मगर दादी की क्षुधा और तृष्णा दोनों अतृप्त रह जाती है। हारकर लाडली दादी को आंगन में बिखरे जुठे पत्तलों के आगे ले जाकर बिठा देती है। बुढ़िया यह भूल जाती है कि वह एक विधवा ब्राह्मणी है और उसे दूसरों का जूठन नहीं खाना चाहिए। वह पत्तल पर आदिम तरीके से टूट पड़ती है।

इस खटपट से लाडली की माँ जाग जाती है और आंगन का दृश्य देखकर विचलित हो जाती है। उसे अपनी गलती का अहसास हो जाता है। वह एक पत्तल में सारे पकवान परोस कर आदर और स्नेह के साथ काकी को खिलाती है और अपनी गल्तियों के लिए माफी मांगती है। इस प्रकार वह छोटी बच्ची अपने आचरण से निष्ठुर माँ का हृदय परिवर्तन करने में सफल होती है।

प्रेमचन्द के अधिकतर बाल पात्र इसी तरह के खास आचरण और चरित्र वाले हैं। ऐसे पात्र जो बालमन पर सार्थक प्रभाव डालें और उन्हें एक बेहतर नागरिक बनने की प्रेरणा प्रदान करें। इसी क्रम में श्बौड़मश कहानी के बाल चरित्र को देखा जा सकता है। बौड़म एक ऐसे मुस्लिम किशोर की कहानी है, जो एक कारोबारी और धनाढ्य परिवार का सदस्य है। मगर वह अपने पिता और चाचा की तरह धन के पीछे पागल नहीं है। वह त्यागी किस्म का राष्ट्रभक्त लड़का है। उसे पता है कि देश में बहुसंख्यक लोग भूखों मर रहे हैं। इज्जत निवारण के लायक भी उनके पास कपड़े नहीं हैं। इसलिए खलील नवाबी ठाठ–बाट और खानपान को हराम समझता है। वह सादा खाता है और मामूली वस्त्र धारण करता है। लूट–खसोट के पारिवारिक कारबार में कभी हाथ नहीं बंटाता द्य कौम की खिदमत में लगा रहता है। इसलिए घर में सबलोग उसे बौड़म समझते हैं और जब घर के लोग बौड़म समझते हैं तो बाहरी लोग भी उसे इसी नाम से पुकारते हैं। वह अपने बारे में कहता है– ''लोगों को कारोबार के सिवाय दीन से गरज है, न दुनिया से। न मुल्क से, न कौम से। मैं अखबार मंगाता हूँ, स्मर्ना फंड में कुछ रुपये भेजता हूँ। खिलाफत फंड को भी मदद करना फर्ज समझता हूँ। सबसे बड़ा सितम है कि खिलाफत का राजकार भी हूँ। क्यों साहब, जब कौम पर, मुल्क पर और दीन पर चारों तरफ से दुश्मनों का हमला हो रहा हो, तो क्या मेरा फर्ज नहीं है कि जाति के फायदे को कौम पर कुर्बान कर दूँ। इसीलिए घर में और बाहर मुझे बौड़म का लकब दिया गया है।'' [6]

## निष्कर्ष

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रेमचन्द के बाल चरित्र चित्रण का वैशिष्ट यही है कि वे अपने पात्रों के अन्तस्तल में पैठकर उसकी तमाम अच्छाइयों और बुराइयों को सामने ला देते हैं, मगर हमेशा अन्तर्द्वन्द्व के जरिये गलत विचारों पर अच्छे विचारों की विजय को ही प्राथमिकता देते हैं। और यही प्रेमचन्द को महान कथाकारों की श्रेणी में खड़ा करता है। प्रेमचंद की कहानियों के बाल–चरित्र अनेक प्रकार के मानवीय गुणों से युक्त हैं। उनमें मानवीय संवेदना का उत्कर्ष है। वे कहीं भी किसी भी परिस्थिति में टूटता नहीं है, बल्कि संघर्ष के माध्यम से स्वयं का एक व्यक्तित्व निर्मित करता है। ये पात्र समाज की मृतप्राय संवेदना को जगाने में सफल है। अतएव कहा जा सकता है कि प्रेमचंद बाल–चरित्र के निर्माण में हिन्दी के सर्वाधिक सफल कहानीकार हैं।

## संदर्भ–संकेत


1. 'प्रेमचन्द और उनका युग', रामविलास शर्मा, पृ.–87
2. वही, पृ.–89
3. 'प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ', भाग–2, सुमित्रा प्रकाशन, पृ. –627
4. 'अन्यथा' पत्रिका–जुलाई–सितम्बर 2007 का अंक
5. 'प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियाँ–1', सुमित्र प्रकाशन, पृ.–1–2
6. वही, पृ.– 705